विक्रम संवत-२०३५, श्रावण शुक्ल - ९, बुधवार, तारीख २०-८-१९८०
वचनामृत- २०० प्रवचन-१३

वचनामृत, २०० है न ? मूल बात है, प्रभु ! **शुद्धनय की अनुभूति...** मुद्दे की रकम की बात है, भाई ! प्रथम सम्यग्दर्शन होने पर शुद्ध अनुभूति होती है। आत्मा का आनन्द आदि अनन्त गुण का वेदन व्यक्तपने के अंश में आता है। **शुद्धनय की अनुभूति अर्थात् शुद्धनय के विषयभूत अबद्धस्पृष्टादिरूप...** जो १५वीं गाथा में कहा। जो कोई **अप्पाणं** अबद्धस्पृष्ट, अनन्य, अव्यक्त, असंयुक्त देखता है, वह जिनशासन को देखता है। अन्तर में अनन्त आनन्द (है), ऐसी जो अनुभूति, वह सर्व जैनशासन का सार है। आहाहा ! **शुद्धनय की अनुभूति अर्थात् शुद्धनय के विषयभूत अबद्धस्पृष्टादिरूप शुद्ध आत्मा की अनुभूति...** आहाहा ! जहाँ बद्धस्पृष्ट-कर्म के साथ सम्बन्ध ही नहीं। भावकर्म के साथ सम्बन्ध नहीं है। ऐसी दृष्टि पर्याय के ऊपर से उठकर द्रव्य पर अन्दर जाती है, तब अबद्धस्पृष्ट आदि अनुभूति होती है। आहाहा ! धर्म की शुरुआत यहाँ से होती है।

शुद्धनय की अनुभूति अर्थात् शुद्धनय के विषयभूत अबद्धस्पृष्टादिरूप... १४वीं और १५वीं गाथा। १४वीं गाथा में सम्यग्दर्शन का विषय है। १५वीं में सम्यग्ज्ञान का। जिसे यह आत्मा अबद्धस्पृष्ट, अनन्य, अविशेष, गुण-ज्ञान, दर्शन, आनन्द—ऐसा भेद भी जिस दृष्टि में से निकल जाता है। तब वह आत्मा का त्रिकाल का पत्ता लेकर, त्रिकाल का-आत्मा का अनुभव होता है, यह पूरे जैनशासन का सार है। आहाहा ! शुरुआत यहाँ से होती है। जैनधर्म कोई पक्ष नहीं है, प्रभु ! यह कोई सम्प्रदाय नहीं है। यह तो वस्तु का स्वरूप (है), जैसा वस्तु का स्वरूप है, ऐसा भगवान ने जाना, ऐसा वाणी में आया कि तेरी चीज़ अन्दर अबद्धस्पृष्ट है। अबद्धस्पृष्ट है - अबद्ध अर्थात् मुक्त। आहाहा ! और राग से भी स्पर्श नहीं। आहाहा ! और गुणभेद का भी स्पर्श नहीं। अभेद चीज़ है, अनुभव में आनेवाली चीज़ है, उसमें गुणभेद प्रभु ! अनुभव में नहीं आता। क्योंकि गुणभेद विकल्प है। आहाहा ! गुण हैं अनन्त। अनन्तानन्त। उसका एकरूप आत्मा, उसका अनुभव हुआ। अबद्धस्पृष्टादिरूप

शुद्ध आत्मा की अनुभूति (हुई)। आहाहा! पहली चीज़ यह है। बाद में दूसरी बात। व्रत, नियम तो सम्यग्दर्शन होने के बाद।

जो चीज़ जानने में आयी कि यह अनन्त आनन्द, अनन्त शान्ति का सागर नजर में आया, उसमें स्थिरता करने की चीज़ बाद में शुरु होती है। चारित्र की। पहली चीज़ ही दृष्टि में आयी नहीं तो कहाँ स्थिर रहना? कहाँ जमना? कहाँ रहना? कहाँ स्थिर रहना? जो चीज़ ही दृष्टि में आयी नहीं, अनुभव में यह चीज़ आनन्द है, अतीन्द्रिय आनन्द का रसकन्द है, ऐसा ज्ञान में ज्ञेयरूप पूर्ण ज्ञेयरूप ज्ञान में वेदन में न आये, तब तक स्थिरता किसमें करनी? चारित्र स्थिरता है। चरना है, रमना है। किसमें रमना? चीज़ ही जहाँ दृष्टि में-अनुभव में आयी नहीं। आहाहा! पहले मुद्दे की रकम की बात है।

मुमुक्षु : मुद्दे की बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : मुद्दे की बात है। बहिन ने तो स्वयं को अन्दर है, वह बात बाहर रखी है। दुनिया को बैठे, न बैठे, दुनिया जाने। आहाहा!

उन्होंने तो बात रखी कि अबद्धस्पृष्टादिरूप आत्मा की अनुभूति, वह शुद्धनय के विषयभूत है। शुद्धनय अर्थात् सम्यग्ज्ञान, जो स्वभाव-सन्मुख ज्ञान (हुआ), पर्याय और पर-ओर से जिसकी दशा विमुख (हुई), उस दशा की दिशा अबद्धस्पृष्ट की ओर जाती है। आहाहा! अन्तर में पूर्णानन्द का नाथ, अपनी पर्याय में अनुभव में आनेवाला आया तो कहते हैं कि उसने सर्व जाना। एगं जाणई सव्वं जाणई, ऐसा शब्द है, प्रवचनसार में। एक आत्मा ही जानो और एक आत्मा को जाना कब कहने में आये? आहाहा! अनादि-अनन्त पर्यायरूप आत्मा। अनादि-अनन्त पर्यायरूप आत्मा एक समय में जानने में आता है। एक आत्मा जाना, उसने तीनों काल की पर्याय अन्दर जानी है। आहाहा! प्रवचनसार में ४७-४८ गाथा में चलता है। आहाहा! कोई कहे कि दूसरे को न जाने तो आचार्य कहते हैं कि, हम कहते हैं कि तूने एक को तो जाना है या नहीं? तू तो त्रिकाली है। तू त्रिकाली है, एक समयमात्र का तो है नहीं। तुमको जाना तो तुम्हारी तीन काल की पर्याय जाननेवाला उसमें आ गया। आहाहा! समझ में आया?

यहाँ यह कहा, **शुद्धनय के विषयभूत अबद्धस्पृष्टादिरूप...** पाँच बोल है न? पाँच

बोल। **शुद्ध आत्मा की अनुभूति...** अबद्धस्पृष्टादिरूप मुक्तस्वरूप अभेद मैं हूँ, ऐसा अन्तर में अनुभव हुआ-अनुभूति हुई, आनन्द का स्वाद आया। आहाहा! और पूर्णानन्द का नाथ का पूर्ण जितनी चीज़ है, सबका पर्याय में नमूना आ गया। क्या कहा यह? जितने अन्दर गुण हैं, संख्या से अनन्तानन्त (गुण), जहाँ सम्यग्दर्शन हुआ, अनुभूति हुई तो पूरे आत्मा के गुण का एक अंश व्यक्त सब आ गये। एक तो त्रिकाली में आ गया और सर्व गुण का व्यक्त एक अंश आ गया। एक को जाना तब कहा जाए कि त्रिकाली एक है, ऐसा जाना, तब त्रिकाली को जाना। कोई कहे कि वर्तमान ही जाने, भविष्य का नहीं जानते हैं। (उसे पूछे कि), तू एक है या नहीं? तू त्रिकाली में है या एक वर्तमान काल है। तीन काल को जाननेवाला तू... ऐसा शब्द है वहाँ, वह चर्चा बहुत हुई थी। इन्दौर से बंसीधरजी आये थे। सेठ हुकमीचंदजी आदि आये थे।

एक को जाना, उसने तीन काल को जाना। क्योंकि आत्मा तीन काल में रहनेवाला है। आहाहा! और तीन काल की पर्याय का पिण्ड, उसे जाना तो तीन काल को जाना। त्रिकाल की पर्याय भी अन्तर में आ गयी है। द्रव्य की दृष्टि में पर्याय की दृष्टि, पर्यायदृष्टि नहीं, परन्तु पर्याय का भेद आ गया। आहाहा! सूक्ष्म बात है, प्रभु! यह कोई विद्वत्ता की वस्तु नहीं है। यह कोई पण्डिताई की चीज़ नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु : अनुभव की बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो अन्तर की बातें है, बापू! बोलने में कोई बात सीख ले, ऐसी यह बात नहीं है। यह तो अन्तर अनुभव की बात है। आहाहा!

जिसने शुद्धनय की अनुभूति अर्थात् शुद्धनय के विषयभूत अबद्धस्पृष्टादिरूप। सामान्यपना-भेद नहीं, पाँच बोल है न? पर्याय का भेद नहीं। पाँच बोल आये हैं न? उसे जाना। **शुद्ध आत्मा की अनुभूति, सो सम्पूर्ण जिनशासन की अनुभूति है।** आहाहा! जिसने आत्मा के अनुभव में अनन्त आनन्द (जाना), त्रिकाली को जाना और त्रिकाली का एक अंश वर्तमान वेदन में आया, वह चीज़ पूर्ण है। यहाँ तो नमूना आया है। जैसा अंश आया, ऐसी पूर्ण चीज़ है। अनन्त गुण का अंश वेदन में आया तो अनन्त अंश व्यक्त बाह्य में आया, (ऐसी) अव्यक्त पूर्ण चीज़ अन्दर है। अव्यक्त अर्थात् बाह्य पर्याय में वह चीज़

आ नहीं सकती। आहाहा!

द्रव्य जो है, वह पर्याय में नहीं आ सकता। क्योंकि वेदन तो पर्याय का ही होता है। ध्रुव का कभी वेदन होता नहीं। आहाहा! १७२ गाथा। अलिंगग्रहण के २० बोल लिये हैं, उसमें २०वें बोल में लिया है कि ध्रुव का अनुभव नहीं होता। ध्रुव तो एकरूप टिकनेवाली चीज़ है। सनातन त्रिकाल एकरूप, बिना पलटती हुई। उसकी दृष्टि पर्याय है, पर्याय में जो उसका अनुभव हुआ, वह पर्याय का वेदन है। और पर्याय का वेदन है, उसके द्वारा—नमूना द्वारा पूरी चीज़ ऐसी है, ऐसा प्रतीति में आ गया। जिसका नमूना आया नहीं, उसको यह चीज़ पूर्ण ऐसी है, उसकी प्रतीति कहाँ से होगी? आहाहा!

यहाँ कहा, **सम्पूर्ण जिनशासन की अनुभूति है।** आहाहा! जिसने भगवान आत्मा त्रिकाली, वर्तमान में जानने में त्रिकाली आया और त्रिकाली का नमूना भी वर्तमान में आया। आहाहा! यह पूर्ण चीज़ अनादि-अनन्त ऐसी है, उसने पूरे चौदह ब्रह्माण्ड को जाना। सम्पूर्ण जिनशासन की अनुभूति है। **चौदह ब्रह्माण्ड के भाव उसमें आ गये।** ब्रह्माण्ड अर्थात् चौदह राजू लोक है न? रात को प्रश्न आया था कि चौदह ब्रह्माण्ड अर्थात् क्या? उसे राजू कहते हैं शास्त्र, चौदह राजू लोक। चौदह राजू लोक लम्बा है न? चौदह ब्रह्माण्ड के भाव, एक जानने में आता है तो सब जानने में आता है, ऐसा प्रवचनसार में ४७-४८ गाथा में है। यहाँ तो इतना शब्द लिया। आहाहा! **चौदह ब्रह्माण्ड के भाव उसमें आ गये।** यह आत्मा ऐसा है, ऐसे ही अनन्त आत्मा हैं, और उससे विपरीत अनन्त जड़ भी अनुभूति की शक्ति से रहित है, ऐसा चौदह ब्रह्माण्ड का ख्याल उसमें आ गया। आहाहा! कठिन बात है, प्रभु! यह कोई पण्डिताई की चीज़ नहीं है। अन्तर की चीज़ है। व्यवहार पर वजन दे, (परन्तु) व्यवहार तो हेय है। कथनमात्र ... है। कथनमात्र कहे बिना समझे नहीं, ऐसा तो आवे शास्त्र में। पहले ८वीं गाथा में आया न? कि आत्मा कहा गुरु ने, शिष्य ने सुना। पहले दृष्टान्त में आया कि ब्राह्मण ने स्वस्ति कहा। ब्राह्मण आया कोई, (उसने) स्वस्ति (कहा)। सुननेवाला समझा नहीं तो टग-टग, टग-टग देखता रहा। विरोध न किया, अनादर न किया। समझ में नहीं आया। समझ में नहीं आया तो अनादर न किया। ऐसा पाठ आता है। टग-टग-टग-टग देखता है। स्वस्ति क्या? क्या कहते हैं? बाद में जब उसका स्पष्टीकरण किया, प्रभु! स्वस्ति का अर्थ स्व—तेरा स्व उसका अस्ति,

जैसी चीज़ है, ऐसा तेरा कल्याण हो। आहाहा! स्व तेरी जैसी अस्ति है, उसका तुझे अनुभव हो। यह स्वस्ति का अर्थ है। तो सुननेवाले की आँख में आँसू आ गये। ओहोहो! यह बात!

ऐसे गुरु ने आत्मा कहा, सुना, परन्तु आत्मा जाना नहीं कि क्या है और अनादर नहीं किया कि आत्मा-आत्मा क्या करते हो? दूसरी बात तो लो। ऐसा कुछ नहीं (किया)। आत्मा कहा तो सुनने में टग-टग देखने लगा। ऐसा प्रश्न नहीं हुआ कि साहब! आत्मा के सिवा दूसरी बात तो करो पहले, पुद्गल की, छह द्रव्य की, देव-गुरु-शास्त्र की। ऐसा प्रश्न किया नहीं। गुरु ने आत्मा कहा तो विनयवन्त शिष्य टग-टग देखता है। समझा नहीं। आत्मा क्या, समझा नहीं। उसका उत्तर कहा, प्रभु! कहनेवाले ने कहा अथवा दूसरे ने कहा, ऐसा पाठ है। दूसरे ने अथवा कहनेवाले ने कहा, आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा। बस। दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो। वह सम्यग्दर्शन निर्मल। निश्चय सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त करे, वह आत्मा। इतना व्यवहार कथनी में आया। अन्दर में भेद नहीं है, वस्तु में भिन्न नहीं है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र अभेद आत्मा में है। परन्तु कथनी में भेद करके आया तो कथनी तो जड़ की है। आहाहा! परन्तु वह कथनी आती है। परन्तु उस कथनी को समझ में आता नहीं। क्योंकि वह तो जड़ है। आहाहा! बाद में टग-टग देखता है। उसने कहा तो उत्तर यह कहा।

प्रभु! तेरा आत्मा अन्दर त्रिकाली है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा। राग को प्राप्त हो, व्यवहाररत्नत्रय को प्राप्त हो, वह आत्मा—ऐसा कहा ही नहीं। आहाहा! अभी तो प्रथम शिष्य है, आत्मा का अर्थ समझता नहीं। उसको भी यह कहा। आहाहा! जैनशासन की उत्कृष्टता अलौकिक है। जगत में तो कहीं नहीं है। वीतराग परमात्मा के सिवा, तीन लोक के नाथ सर्वज्ञदेव विराजते हैं, प्रभु। कुन्दकुन्दाचार्य वहाँ गये थे, आठ दिन रहे थे। सुनकर आये और यह शास्त्र बनाया। आत्मा कहकर, दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त करे, वह आत्मा, ऐसा बनाया। वह व्यवहार है, वह भी व्यवहार है। राग दया, दान, व्रत व्यवहार की बात तो ली ही नहीं। पण्डितजी! यह बात तो ली ही नहीं।

मात्र प्रभु अन्तर में दर्शन, ज्ञान, चारित्र जो स्वभाव है, वह व्यक्तपने पर्याय में जानने में आया और उसके द्वारा आत्मा जानने में आता है। इतना व्यवहार आये बिना रहता नहीं। फिर भी आचार्य कहते हैं, मैंने ऐसा कहा (कि) दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त करे, वह

आत्मा। प्रभु! मैं कहता हूँ, वहाँ पाठ है, यह बात मुझे भी अनुसरण करने लायक नहीं है और तुझे भी अनुसरण करने लायक नहीं है। आहाहा! है न? है अन्दर। मैं कहता हूँ, प्रभु! मुझे अनुसरण करने लायक नहीं है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा, ऐसा मुझे भी अनुसरण करने लायक नहीं है। तीन को छोड़कर अकेले आत्मा का अनुसरण करना ही मेरी चीज़ है। और तुझे भी मैंने भेद करके समझाया, तुझे भी वह भेद अनुकरण करने लायक नहीं है, हों! आहाहा! ऐसा पाठ है। मुझे और तुझे, जो व्यवहार कहा, वह अनुसरणीय नहीं है, अनुसरणीय नहीं है, अनुकरणीय नहीं है। जो कहते हैं, वह करने लायक नहीं है। अनुसरणीय नहीं है। कहते हैं, उसका वर्णन करना नहीं। आहाहा! पहले शब्द में (ऐसा कहा)। समयसार, ८वीं गाथा। **ज ह णवि सक्कमणज्जो अणज्जभासं।** आहाहा!

वैसे यहाँ कहते हैं, जिसे आत्मा की अनुभूति (हुई)... प्रवचनसार में भी ऐसा लिया है कि तू ऐसा माने कि तीन काल को न जान सके। तो मैं पूछता हूँ कि तू तीन काल में है या नहीं? तू तुझे जानता है तो तीन काल जाना है या नहीं? तुमको जाना तो उसमें तीन काल आया या नहीं? आहाहा! आचार्यों की तो बलिहारी है। बहुत संक्षिप्त शब्दों में अन्तर की अनुभव की बातें रखी है। यहाँ कहते हैं, **आत्मा की अनुभूति, सो सम्पूर्ण जिनशासन की अनुभूति है। चौदह ब्रह्माण्ड के भाव उसमें आ गये।** आहाहा! एक आत्मा ऐसा जाना तो अनन्त आत्मा ऐसे हैं और उससे-आत्मा से रहित अनात्मा भी जड़ अनन्त हैं। अस्ति का जहाँ भान हुआ तो नास्ति का भी ज्ञान आ गया। आहाहा! मेरे में अनन्त आत्मा की नास्ति है और अनन्त जड़ की भी नास्ति है। वह भी मेरे में अस्ति है। पर की नास्ति मेरे में अस्ति है। आहाहा! समझ में आया?

यह यहाँ कहते हैं, **चौदह ब्रह्माण्ड के भाव उसमें आ गये।** अनुभूति हुई, उसमें चौदह ब्रह्माण्ड के भाव आ गये। आहाहा! कठिन पड़े, प्रभु! प्रभु! तू त्रिकाली है न। एक समय का नहीं है। त्रिकाली है और अनन्त गुण का पिण्ड है। उसे जहाँ जाना... दूसरी चीज़ भी है, मैं एक ही हूँ—ऐसा ज्ञान में नहीं। ज्ञान में तो स्व-परप्रकाशक स्वभाव है, तो स्व का और पर का ज्ञान उसमें आ जाता है। आहाहा! सम्यग्दृष्टि के ज्ञान में भी अव्यक्तपने भी स्व-परप्रकाशक तो आ जाता है। पूरा प्रत्यक्ष केवली देखे ऐसे नहीं। मैं हूँ, दूसरी चीज़ भी

है परन्तु मेरे में नहीं है। आहाहा! एक आत्मा का ज्ञान होने से चौदह ब्रह्माण्ड का ज्ञान हो गया। आहाहा! चौदह ब्रह्माण्ड का नाथ जिसके हाथ में-अनुभव में आ गया, उसे क्या क्षति रही? आहाहा! प्रथम तो यह करने की चीज़ है, प्रभु! इसके बिना सब व्यथ है। बिना एक के शून्य है। लाख शून्य लिखे तो एक नहीं हो जाता। आहाहा! एक के बाद शून्य लिखे तो दस हो जाए। वैसे अनुभव होने के बाद स्वरूप में स्थिरता करे तो चारित्र हो जाए। समझ में आया? अन्तर की दृष्टि के अनुभव बिना स्थिरता भी होती नहीं, दृष्टि भी होती नहीं। आहाहा!

मोक्षमार्ग,... भी ख्याल में आ गया, कहते हैं। जहाँ आत्मा की अनुभूति हुई... आहाहा! वही मोक्षमार्ग है। भले चौथे गुणस्थान में लिया। समयसार में १४वीं गाथा समकिती की ही ली है, चौथे गुणस्थान की ही ली है। १५वीं भी समकिती की ही ली है। यह आत्मा को जाना, (उसने) जैनशासन जान लिया। जैनशासन का जो अन्दर मर्म था, त्रिकाल में अनन्त गुण (हैं), ऐसा जो द्रव्य का मर्म था, ऐसा भान हुआ तो चौदह ब्रह्माण्ड का भाव आ गया। आहाहा! समझ में आया?

यहाँ तो बहिन कहते हैं, मोक्षमार्ग भी जान लिया। आहा..! अनुभूति हुई तो मोक्ष का मार्ग यही है, (ऐसा जान लिया)। आहा..! अतीन्द्रिय आनन्द का वेदन ही मोक्ष का मार्ग है और अतीन्द्रिय आनन्द की पूर्णता, मोक्ष है। आहा..! आत्मा की अनुभूति में मोक्षमार्ग का भी ज्ञान हो गया। अरे..! केवलज्ञान का भी ज्ञान हो गया। आहाहा! क्योंकि एक सम्पूर्ण चीज़ पड़ी है, उसमें से नमूनामात्र प्रगट व्यक्ति आयी है, पूर्ण पड़ा है तो उसका नमूना आया। तो जब पूर्ण में से पूर्ण प्रगट होगा, पूर्ण में से पूर्ण प्रगट होगा केवलज्ञान। अनुभूति में केवलज्ञान का भी ज्ञान आ गया। आहाहा!

और **मोक्ष...** उसका ज्ञान भी आ गया। क्योंकि अबद्धस्पृष्ट है, वह मुक्त है। आत्मा मुक्त है। पूर्ण मुक्त हो जाएगा, वह तो उसमें आ गया। पर्याय में पूर्ण मुक्त हो जाएगा। द्रव्य मुक्त है। द्रव्य का भान हुआ तो पर्याय में मुक्त हो जाएगा। क्योंकि मुक्त की परिणति मुक्त होगी। आहाहा! तो मोक्ष का ज्ञान भी उसमें आ गया। **इत्यादि सब जान लिया।** इत्यादि सब जान लिया। आहाहा! तीन पंक्ति में बहुत भरा है। आहाहा! इत्यादि। मोक्ष इत्यादि।

आदि से लेकर सब जान लिया। आहा..! पर्याय का ज्ञान हो गया, गुण का ज्ञान हो गया। प्रगट हुई पर्याय, प्रगट शक्ति में से हुई है तो शक्ति-गुण है और एक ही पर्याय नहीं हुई, अनन्ती आयी है। अनन्त गुण जो हैं, अनन्त गुण का एकरूप द्रव्य भी है। अनन्त गुण का रूप एक द्रव्य भी है। द्रव्य का ज्ञान, गुण का ज्ञान, पर्याय का ज्ञान भी आ गया। आहाहा! **इत्यादि सब जान लिया।**

'सर्वगुणांश सो सम्यक्त्व'। यह श्रीमद् का वाक्य है। सर्व गुणांश। जितने अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. गुण भगवान आत्मा में संख्या से हैं, सबका एक अंश समकित में प्रगट होता है। अपने मोक्षमार्गप्रकाशक में रहस्यपूर्ण चिट्ठी में टोडरमलजी ने लिया है। वहाँ ऐसा शब्द लिया है, यहाँ श्रीमद् ने सर्वगुणांश सो समकित कहा है, उन्होंने ऐसा लिया है कि ज्ञानादि एकदेश सर्व प्रगट होते हैं। चिट्ठी में है। ज्ञानादि जितने गुण हैं, उन सबका एक अंश प्रगट होता है और केवलज्ञान में ज्ञानादि पूर्ण प्रगट होते हैं। दो लेख है। चिट्ठी में दोनों लेख है। रहस्यपूर्ण चिट्ठी। आहाहा! अरे..! प्रभु का एक वाक्य भी कितना रहस्ययुक्त है! हिन्दी आती है या नहीं?

'सर्वगुणांश सो सम्यक्त्व'—अनन्त गुणों का अंश प्रगट हुआ;... आहा..! सम्यग्दर्शन अर्थात् सत्य दर्शन। अर्थात् जितना सत्य है, जितना परम सत्य है, उन सबका एक अंश पर्याय में आता है। उसका नाम समकित कहने में आता है। वह अंश ज्ञान हुआ। अंश का ज्ञान होने से पूर्ण आत्मा का ज्ञान भी हो गया। बीज का ज्ञान होने से... बीज समझे? दूज। दूज लिखा है? दूज को दिखाती है, लेकिन आकार भी है उसमें। दूज के दिन भी पूर्ण आकार दिखता है। देखा है चंद्र? दूज इतनी है, परन्तु पूरा आकार-पूर्ण का आकार भी साथ में दिखता है। भले खुला नहीं है, आकार दिखता है। आहाहा!

ऐसे सम्यग्दर्शन में पूर्ण चीज़ है, परन्तु पूर्ण चीज़ क्या है, उन सबका ज्ञान अन्दर आता है। आहाहा! सम्यग्दर्शन और अनुभूति कोई अलौकिक चीज़ है! भले गृहस्थाश्रम में हो, राजपाट धन्धा, चक्रवर्ती का राज करे, फिर भी अनुभूति होती है। आहाहा! और द्रव्यलिंगी सब छोड़कर बैठे और नौवीं ग्रैवेयक अनन्त बार (गया)। ऐसी क्रियाकाण्ड की कि चमड़ी निकालकर नमक छिड़के तो भी क्रोध न करे, ऐसी क्रिया की, परन्तु एक भी अंश आत्मा का नहीं जाना। सब पुण्य की क्रिया, जहर की क्रिया, सब जहर के प्याले

हैं। आहाहा! मोक्ष अधिकार में है, विषकुम्भ। मोक्ष अधिकार। शुभभाव विषकुम्भ है, ऐसा लिखा है। जहर का घड़ा है। विषकुम्भ। भगवान अमृतकुम्भ। आहाहा! अतीन्द्रिय आनन्द का नाथ अमृत का सागर है और यह पुण्यादि है... आहाहा! सागर नहीं कहा, जहर का घड़ा कहा। एक समय की पर्याय है न। समय की पर्याय है।

मुमुक्षु :- यहाँ तो जहर का घड़ा है, वहाँ अमृत का सागर है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- सागर। भगवान अमृत का सागर है। यह एक अमृत का अंश है। तो इस अंश द्वारा पूरे अंशी का ख्याल आया। अंश के ख्याल में पूरे अंशी का (ख्याल आ गया)। जैसे दूज को देखने से दूज का ख्याल और पूर्ण आकार ऐसा है, आज ऐसी (कला) है, वह सब ज्ञान हो गया। आहाहा! अरे..! सब अंश तो प्रगट हुआ, **समस्त लोकालोक का स्वरूप ज्ञात हो गया।** इस जाति से जात की जहाँ छाप अन्दर में पड़ी, आहाहा! तो **समस्त लोकालोक का स्वरूप ज्ञात...** होता है। यह ज्ञान इतना है तो पूर्ण लोकालोक है और पूर्ण ज्ञान भी है, उसका ज्ञान हो जाता है। आहाहा!

जिस मार्ग से यह सम्यक्त्व हुआ... जिस मार्ग से अर्थात् अन्तर्मुख से भगवान अनन्त गुण का पिण्ड पूर्णरूप जहाँ बीज पड़ा है, **जिस मार्ग से यह सम्यक्त्व हुआ...** इस मार्ग से समकित हुआ। अन्तर्मुख दृष्टि से पूर्णानन्द के नाथ को दृष्टि में लिया तो सम्यग्दर्शन हुआ। **उसी मार्ग से मुनिपना...** आहाहा! जिस मार्ग से आत्मज्ञान हुआ, उसी मार्ग से मुनिपना होगा। मुनिपना कोई क्रियाकाण्ड से होगा, ऐसा नहीं। ऐसा कहते हैं। आहाहा! कठिन बात है, भाई! २०० नम्बर का वचनामृत है। पूर्ण.. पूर्ण। आहा..! **जिस मार्ग से यह सम्यक्त्व हुआ उसी मार्ग से मुनिपना...** आहाहा! अन्तर आनन्द के आश्रय से समकित की प्रतीति हुई, उसके आश्रय से मुनिपना उत्पन्न होता है। चारित्र की दशा, वीतराग की दशा, पंचम गुणस्थान की दशा, छठे गुणस्थान की दशा, जिस मार्ग से समकित हुआ, उसी मार्ग से यह मुनिपना आदि होता है। मार्ग कोई दूसरा नहीं है। आहाहा! **मुनिपना और केवलज्ञान होगा...** उसी मार्ग से मुनिपना भी होगा और केवलज्ञान भी होगा। आहाहा!

केवलज्ञान तो पर्याय है न? अंश है। पूरा अंशी दृष्टि में आया, यही मार्ग है। दृष्टि में से-वस्तु में से केवल अर्थात् पूर्ण दशा प्रगट होगी। ऐसा केवलज्ञान स्व के आश्रय से

होगा। मुनिपना स्व के आश्रय से होगा। स्वाश्रय से धर्म, पराश्रय से अधर्म। वीतराग के दो सिद्धान्त। अष्टपाहुड़ में है। '**परदव्वादो दुग्गइ सदव्वादो सुग्गइ**' ऐसा पद है। जितने परद्रव्य हैं, उसका लक्ष्य करने से राग ही होगा। '**सदव्वादो सुग्गइ**'। स्वद्रव्य के आश्रय से तेरी गति होगी। आहाहा! ऐसा मार्ग है। उसका साधन? साधन-बाधन होगा या नहीं? यह साधन। व्यवहार उपचार से पूर्णता न हो तो राग की मन्दता होती है। उपचार से साधन कहने में आता है। यथार्थ तो स्वद्रव्य के आश्रय से सम्यक् उत्पन्न हुआ, स्वद्रव्य के आश्रय से मुनिपना और स्वद्रव्य के आश्रय से केवलज्ञान। आहाहा!

ऐसा ज्ञात हो गया। पूर्णता के लक्ष्य से प्रारम्भ हुआ;... क्या हुआ? पूर्णता के लक्ष्य से। पूर्ण स्वरूप जो भगवन्त, उसके लक्ष्य से प्रारम्भ हुआ है। शुरुआत ऐसे हुई है। पूर्णता के लक्ष्य से शुरुआत हुई है। **इसी मार्ग से देशविरतिपना,...** आहाहा! इसी उपाय से आत्मा में पंचम गुणस्थान-श्रावकपना (आयेगा)। आत्मा के आश्रय से सम्यग्दर्शन हुआ, ऐसे पंचम गुणस्थान आत्मा के आश्रय से उत्पन्न होता है। आहाहा! कोई क्रियाकाण्ड के आश्रय से पंचम गुणस्थान नहीं होता। क्रियाकाण्ड होता है, भूमिका अनुसार राग की मन्दता, क्रिया होती है। परन्तु हेय है। **इसी मार्ग से देशविरतिपना,...** आहाहा! स्वद्रव्य के आश्रय से श्रावकपना (आता है)। उसको श्रावक कहते हैं। सम्प्रदाय में जन्म हुआ और कोई व्रतादि ले लिया, तो श्रावक है, ऐसा जैनमार्ग में है नहीं। आहाहा!

जैनमार्ग में **इसी मार्ग से देशविरतिपना,...** आत्मा के अवलम्बन से होता है। जैसे सम्यग्दर्शन, ज्ञान आत्मा के अवलम्बन से हुआ, वैसे पंचम गुणस्थान आत्मा के अवलम्बन से, आनन्द के अवलम्बन से (होता है)। सम्यग्दर्शन तो अवलम्बन से हुआ ही है, इससे विशेष अवलम्बन लेने से पंचम गुणस्थान होता है। जघन्य अवलम्बन लेने से समकित; मध्यम अवलम्बन लेने से पंचम, छठा आदि; उत्कृष्ट अवलम्बन लेने से केवलज्ञान। आहाहा! ऐसी बात है। **देशविरतिपना, मुनिपना, पूर्ण चारित्र एवं केवलज्ञान—सब प्रगट होगा।** इस मार्ग से। दूसरा कोई मार्ग है नहीं। आहाहा!

नमूना देखने से पूरे माल का पता चल जाता है। दृष्टान्त देते हैं। नमूना देखने से... रुई की बड़ी गाँठ होती है न? क्या कहते हैं? रुई का गोला। २५-२५ मण। उसका नमूना

बताये कि इस जात का है। गाँठ इस जात की है। कीमत देनी है तो यह कीमत है। पूरी गाँठ नहीं देखते, उसका नमूना देखे कि पूरी गाँठ ऐसी है। ऐसे **नमूना देखने से पूरे माल का पता चल जाता है।** आहाहा! एक सम्यग्दर्शन की पर्याय हुई तो अन्दर श्रद्धागुण पूर्ण है, ऐसा पता लगता है। आनन्द का अंश हुआ तो अन्दर पूर्णानन्द है, उसका पता लग जाता है। शान्ति प्रगट हुई-चारित्र का अंश तो अन्तर में पूर्ण शान्ति गुण में भरी है, ऐसा पता लग जाता है। ऐसे वीर्य का अंश प्रगट हुआ। वर्तमान निर्मल गुण की पर्याय की रचना करनेवाले को वीर्य कहते हैं। स्वरूप की रचना करनेवाले को वीर्य कहते हैं। ४७ शक्ति में आ गया है। समयसार, ४७ (शक्ति में) यह शब्द है। स्वरूप की रचना करे, सो वीर्य। आहाहा! अपना स्वरूप शुद्ध चैतन्यघन आनन्दकन्द है, उसमें जो रचना पर्याय में निर्मलता करे, उसका नाम वीर्य (है)। आहाहा! और राग की रचना करे, वह तो अति स्थूल (है)। सम्यग्दर्शन बिना शुभभाव को तो नपुंसकता की उपमा दी है। दो जगह है—पुण्य-पाप और अजीव अधिकार में, समयसार। आहाहा!

यहाँ कहते हैं कि, पूर्णता के लक्ष्य से प्रारम्भ हुआ, उससे सब प्रगट होगा। **नमूना देखने से पूरे माल का पता चल जाता है। दूज के चन्द्र की कला द्वारा...** देखो! दृष्टान्त दिया। **दूज के चन्द्र की कला द्वारा पूरे चन्द्र का ख्याल आ जाता है।** पूरा चन्द्र देखा। उसकी ... देखा। विकास कितना है, अवरोध कितना है, पूर्ण कितना है, तीनों दिखने में आता है। आहा...! ऐसे सम्यग्दर्शन हुआ तो विकास कितना हुआ, कितना विकास बाकी है, विकास में अवरोध कितना है, उसका सब ज्ञान हो जाता है। सब अपने कारण से अवरोध है, कोई कर्म के कारण से नहीं। कोई परद्रव्य से आत्मा में कुछ होता है, (-ऐसा) बिल्कुल नहीं। आहाहा! अनादि-अनन्त आत्मा की पर्याय से होती है। विकारी, अविकारी, मिथ्यात्व या केवल (ज्ञान)।

गुड़ की एक डली में पूरी गुड़ की पारी का पता लग जाता है। गुड़... गुड़। एक कणिका में पूरा गुड़ कैसा है, पारी, गुड़ की पूरी पारी होती है, उसमें एक कणिका से भेली ख्याल में आ जाती है। ऐसे ख्याल में आ जाता है। **वहाँ (दृष्टान्त में) तो भिन्न-भिन्न द्रव्य हैं...** क्या कहते हैं? यहाँ तो भिन्न-भिन्न द्रव्य है। गुड़ एक द्रव्य नहीं। आहाहा! जैसे चन्द्रमा भी एक परमाणु नहीं है। एक द्रव्य नहीं। चन्द्रमा में तो अनन्त परमाणु है। गुण की एक

कणिका में अनन्त परमाणु हैं। आहाहा! यहाँ कहते हैं, **वहाँ (दृष्टान्त में) तो भिन्न-भिन्न द्रव्य हैं और यह तो एक ही द्रव्य है।** यह भगवान तो एक ही द्रव्य है। आहाहा! वह तो अनन्त द्रव्य में दूज का दिखाव हो, गुड़ का नमूना हो, वह अनन्त परमाणु हैं, एक परमाणु नहीं। आहाहा! इसमें तो एक में सब आता है। एक ही भगवान आत्मा... आहाहा! अपनी पर्याय में अकेले आत्मद्रव्य से प्रगट होता है, अकेले आत्मा के आश्रय से मुनिपना होता है, एक के आश्रय से केवलज्ञान होता है। मोक्ष तो होता ही है। आहाहा!

वहाँ (दृष्टान्त में) तो भिन्न-भिन्न द्रव्य हैं और यह तो एक ही द्रव्य है। आत्मा। क्या कहा? दूज में तो अनन्त परमाणु का प्रकाश है। एक परमाणु का नहीं। वैसे गुड़ की एक कणिका में अनन्त परमाणु का स्कन्ध है। ऐसा आत्मा में नहीं है। आहाहा! यह दृष्टान्त दिया है। आत्म भगवान एक ही वस्तु अखण्डानन्द प्रभु है। आहाहा! **यह तो एक ही द्रव्य है। इसलिए सम्यक्त्व में चौदह ब्रह्माण्ड के भाव आ गये।** आहाहा! एक द्रव्य का भान हुआ... अधिकार बहुत अच्छा आ गया है। बहिन ने तो उस समय बोला था। दोपहर को आते हैं। आहाहा! क्या कहा?

गुड़ और दूज, एक द्रव्य नहीं है, अनन्त परमाणु हैं। यह तो दृष्टान्त में आया। सिद्धान्त में आत्मा तो एक ही है, एक ही पूर्ण है, उसमें से पूर्णता प्रगट होती है, सम्यग्दर्शन प्रगट होता है, मुनिपना और केवलज्ञान उसमें से ही प्रगट होते हैं। दूसरा कोई उपाय है नहीं। आहाहा! दूसरा द्रव्य है नहीं, उसमें-प्रकाश में तो अनन्त द्रव्य हैं। इसमें तो एक ही द्रव्य है। आहाहा! अकेले द्रव्य के आश्रय से केवलज्ञान उत्पन्न होता है। अकेले आत्मा के आश्रय से केवलज्ञान उत्पन्न होता है। आहाहा! मनुष्यपना बिना मोक्ष होता है? वज्रनाराचसंहनन बिना केवलज्ञान होता है? ऐसा कुछ लोग कहते हैं। प्रश्न बहुत आते हैं। वह हो भले, उससे आत्मा में लाभ होता है, ऐसा नहीं। वज्रनाराचसंहनन तन्दुल मच्छ को भी होता है। अंगुल का असंख्यवाँ भाग। वज्रनाराच(संहनन होता है), और मरकर सातवीं नरक में जाता है। आहाहा! सुना है? तन्दुल मच्छ कहते हैं। है तो छोटा। तन्दुल तो चावल है, यह तो बड़ा है। वह तो बहुत सूक्ष्म है, अंगुल का असंख्यवाँ भाग। परन्तु है वज्रनाराचसंहनन। तो वह नरक में जाता है तो संहनन के कारण नहीं। वैसे यहाँ केवलज्ञान प्राप्त होता है, वह संहनन के कारण नहीं। आहाहा!

मुमुक्षु : यह वाणी सुनकर नरक में नहीं जाता।

पूज्य गुरुदेवश्री : सब आत्मा मोक्ष में जाओ, यहाँ तो यह बात है, भाई! सब आत्मा मोक्ष जाओ, ... होगा। द्रव्यसंग्रह में कहा, दुनिया में कोई भी दुश्मन है ही नहीं। कोई वैरी नहीं है। सब भगवान साधर्मी हैं। द्रव्य से, द्रव्य से साधर्मी हैं। पर्याय में स्वतन्त्र हैं। द्रव्य अन्दर भगवान है, सब साधर्मी हैं। यह तो तीन जगह, पाँच जगह कहा है। आहाहा! एक तो द्रव्यसंग्रह में कहा, पूर्ण हो जाओ। एक, यहाँ समयसार की ३८ गाथा में कहा, मैं ऐसे (लीन हो जाऊँ), ऐसे सब जीव आ जाओ। ३८ गाथा में है। समयसार की ३८ गाथा। सब जीव आ जाओ। आहाहा! भगवान! तेरी शक्ति तो पूर्ण है न, प्रभु! पूर्णता है, उसमें से पूर्णता प्रगट करनी है न, नाथ! तो सब भगवान आ जाओ। लोकालोक जानने में आ जाओ, ऐसा लिखा है। और समयसार में तीन जगह है। एक बन्ध अधिकार में अन्त में, मोक्ष अधिकार में अन्त में और सर्वविशुद्ध अधिकार में है। बड़ी बात। सर्व निर्विकल्पो। मन-वचन-काया रहित सब पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होओ, ऐसी भावना करनी चाहिए। आहाहा! बहुत लम्बी बात है। उदासीन हूँ, भरितअवस्थ हूँ, भरितअवस्थ-अवस्थ अर्थात् पूर्ण। ऐसा शब्द पड़ा है। उदासीनो अहं, भरितोवस्थ अहं, शुद्धो अहं, बुद्धो अहं, उदासीनो अहं। ऐसे बहुत शब्द हैं। बन्ध अधिकार में अन्त में, सर्वविशुद्ध में पूरा होता है वहाँ, और मोक्ष पूरा होता है, वहाँ। आहा...! तीन जगह। सब जीव... भगवान! सर्व जीव मोक्ष को प्राप्त होओ। सर्व जीव कर्मरहित होओ, सर्व जीव आनन्द की पूर्ण दशा को प्राप्त होओ। ऐसी धर्मी की भावना है। आहाहा! समय हो गया.... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)